ISSN: 2456-9186, Vol. I, Issue. III, Dec-2017

वागर्थः

(An International Journal of Sanskrit Research)

Journal Homepage: http://cphfs.in/research.php

आधुनिक संस्कृत काव्य और विदेशजवाद

डॉ.अरुण कुमार निषाद

असिस्टेण्ट प्रोफेसर (संस्कृत विभाग),

मदर टेरेसा महिला महाविद्यालय,

कटकाखानपुर, द्वारिकागंज, सुल्तानपुर(उ.प्र.)

ईमेल- arun.ugc@gmail.com

शोध-सार - *पुराकाल से संस्कृत रचनाकारों ने अपनी कृतियों द्वारा संस्कृत की सेवा की है। वैदिककाल से लौकिककाल और लौकिककाल से लेकर आधुनिक युग तक इसकी कीर्ति पताका सभी दिशाओं में फहरा रही है। कवि को काव्य काव्य जगत का ब्रह्म कहा जाता है। उसके विषय में कहा जाता है –* ***"अपारे काव्य संसारे कविरेक: प्रजापति:/ यथास्मै रोचते विश्वं तथेदं परिवर्तते।*** *कवि अपनी अपूर्व प्रतिभा तथा सर्जनात्मक वैदुष्य द्वारा साहित्य को एक नई दिशा प्रदान करता है। कवि को अगर प्रलयपर्यन्त तक नाम कमाना है तो उसको अच्छी कविता लिखनी पड़ेगी, क्योंकि अच्छी कविता करने वाले को लोग युगों-युगों तक याद रखते है। आज के संस्कृत लेखक के लिए विषय का अभाव नहीं है। उसकी दृष्टि में जो कुछ भी दिखाई दे रहा है, उसे वह अपनी लेखनी से उकेरता जा रहा है। आज का लेखक प्राचीनकाल से चले आ रहे कुछ गिने-चुने विषय पर लिखने के स्थान पर समाज की यथार्थता का वर्णन कर रहा है। संस्कृत का लेखक भी इससे अछूता नहीं है।आज वह भी नई दृष्टि और नये विषय को चुन रहा है। अच्छा साहित्य और अच्छा रचनाकार वही है, जो समय, परिस्थिति और देशकाल के अनुसार हो।*

I. प्रस्तावना

साहित्य के विभिन्नवादों में विदेशजवाद एक नवीन विधा है। इस विधा में कवि या लेखक सुदूर देश-प्रदेश के बारे में वर्णन करता है। भले ही वह उस स्थान को स्वयं न देखकर किसी व्यक्ति से उस स्थान के विषय में सुना हो अथवा किसी पुस्तक आदि में पढ़ा हो। लेखक प्रसंगों को सुनकर, चित्र को देखकर, लिखते समय स्वयं को उस स्थान पर पहुँचा देता है, उस पात्र से मिल लेता है, जिसके विषय में वह लिख रहा होता है। कवि के बारे में कहा भी जाता है कि- "जहाँ न पहुँचे रवि/ वहाँ पहुँचे कवि।" यह कहावत इस वाद के लेखकों पर एकदम सटीक बैठती है।

II. विदेशजवाद विधा के प्रमुख रचनाकार

इस विधा के प्रमुख रचनाकार और उनकी रचनाएँ इस प्रकार हैं- डॉ. रामकरण शर्मा (मोनालिसा), प्रो. राधा वल्लभ त्रिपाठी (आप्ल्सपर्वते मेघदूतम्), रमाकान्त शुक्ल (भाति मोरिशससम् और तुरिनोसपादशतकम्), डॉ. कमलेश दत्त त्रिपाठी (योरोपा), प्रो. 'अभिराज राजेन्द्र मिश्र (राङ्गडा), प्रो. हरिदत्त शर्मा थाई (थाईभूमिरियम्)।

डॉ. रामकरण शर्मा हवाई जहाज यात्रा का वर्णन करते हुए लिखते हैं कि- हवाई जहाज से यात्रा करते समय व्यक्ति क्या – क्या कर सकता है और क्या-क्या नहीं कर सकता है। इस गीत को पढकर कोई भी व्यक्ति हवाई जहाज में बिना बैठे उसमें बैठने जैसा अनुभव करता है। वे लिखते हैं कि- यात्री हवाई जहाज में खा सकता है, पी सकता है, मनोरंजन कर सकता है, पढ़ सकता है, जाग सकता है, सो सकता है, लिख सकता है पढ़ सकता है, परन्तु खिड़की नहीं खोल सकता।

पिबत खादत मोदत यात्रिण:

पठत जागृत माद्यत सीदत

लिखत पश्यत धूमयतापि च

न तु गवाक्षमवावृणुत स्वयम्।। [1]

प्रो. राधा वल्लभ त्रिपाठी ने यूरोप यात्रा का वर्णन करते हुए लिखते हैं कि- नीले आकाश के बीच उड़ने वाले श्वेत बादल कपास के वस्त्र जैसे दिख रहे हैं।

स्यूतं स्यूतं पुनरपि च यच्छीर्यते धार्यमाण

गात्रे क्लृप्तं कथमपि तथाऽऽच्छादने नालमेव
धृत्वा देहे हिममयमितं श्वेतकार्पासवस्त्रं
पृथ्वी चास्ते विकलकरणा निर्धना गेहनीव ।। [2]

प्रो. हरिदत्त शर्मा 'थाईभूमिरियम' कविता में अपने पाठक वर्ग को थाईलैण्ड की धरती पर पहुँचा देते है । वह घर बैठे-बैठे मानसिक रूप से थाईलैण्ड में भ्रमण करने लगता है ।

स्यामनामसुप्रथिता रम्या
थाईभूमिरियम
बहुसुवर्णशुचिदीप्तिराजित:
थाईदेशोऽयम
थाईभूमिरियम ।। [3]

'योरोपीयम्' और 'पेरिसनगरीयम' कविता में भी प्रो. शर्मा यूरोप और पेरिस की सैर करा देते हैं । वे लिखते हैं कि- उन पश्चिमी देशों की वेशभूषा-बोलचाल में तथा हमारी वेशभूषा-बोलचाल में बहुत अन्तर है ।

(क) अयनं विततं नयनं चकितं
प्राविशं यदा नवसंसारम् ।
दृश्यं भव्यं सकलं नव्यम्
आगतो यदा सागरपारम् ।।
भाषा भूषा वैविध्यमयी
इह चित्रविचित्रं परिधानम् ।
नवदेशो वेष: परिवेश:
सर्वं हि समुज्ज्वलमागारम् ।।
अयनं .....।। [4]

(ख) बहुविधचाकचिक्यपरिपूर्णा
पेरिसनीयम् !
पेरिसनीयम् !! । [5]

इसी प्रकार प्रो. रमाकान्त शुक्ल मारीशस का वर्णन करते हुए पाठक को मारीशस की धरती का दर्शन करा देते हैं ।

हर्षमुल्लासमाजो दधाना सदा
रत्नगर्भा धरेयं सदा राजताम्
शारदा-श्रीसपर्यापरं सत्सदा
भातु मौरीशसं भातु मौरीशसम् ।। [6]

डॉ. कमलेश दत्त त्रिपाठी ने 'योरोपा' में लिखा है-

योरोपे, काऽसि त्वम् .....? [7]

प्रो. ओमप्रकाश पाण्डेय ने 'रसप्रिया विभावनम्' काव्य में 'पेरिस' नगरी का वर्णन करते हुए लिखा है । वे वहाँ की सभ्यता और संस्कृति की चर्चा करते हुए लिखते हैं-

अधरैरनुरागवर्षणं
वचनैरेव रसप्रकत्थनम् ।
अरुणैर्नु कपोलयुग्मकै-
रनुरागोद्घुषितो जनैरिह ।। [8]

अर्थात् पेरिस नगरी में लोग अधरों से अनुराग की वर्षा करते हैं तथा शब्दों से प्रेम की भावना की अभिव्यक्ति करते हैं, और चुम्बनों के कारण अरूणवर्णी कपोलयुग्म से अनुराग की घोषणा सी करते रहते हैं । वहाँ की जनता हर समय काम में डूबी रहती है । स्पष्ट है कि- पेरिस की अपनी एक अलग सभ्यता और संस्कृति है और भारत की अलग यहाँ पर जो चीजें वर्जित हैं, अश्लील मानी जाती हैं यहाँ की संस्कृति के अनुसार वह एक सामान्य चीज है ।

रमणीयवने महापथे
बसयानेष्वपि चुम्बने रतान् ।
अवलोक्य नु माति मे मन: ।
प्रणयार्ता वसुधापि कीदृशी ।। [9]

रमणीय उद्यानों में, हर मार्ग पर, यहाँ तक कि बसों, मेट्रो और ट्रेनों में भी नर-नारी परस्पर अधर चुम्बन में संलग्न रहते हैं । इन्हें इस प्रकार एक दूसरे को बेताबी से चूमते चाटते देखकर ऐसा लगता है कि हाय ! यह धरती कितनी प्रणयातुर हो उठी है ।

तृणमूलमये धरातले
कणश: प्रेमरसं विपासव: ।
युवकास्स्वशिरांसि पादयो-
स्तरूणीनां हि निधाय शेरते ।।
युवती निनिधाय हस्तकं
प्रियवक्षोरूहराशिमध्यगे ।
नयनं नयनेनिवेशिनी
किल कण्डूयति तं रसातुरा ।। [10]

प्रेम की एक-एक बूंद को पीने के लिए लालायित युवक घास के मैदानों में युवतियों के पैरों पर सिर रखे लेते रहते हैं और वे प्रेमातुर युवतियाँ प्रेमी के वक्षस्थलजन्य बालों पर हाथ रखे हुए, उसकी आँखों में आँखे डालकर वक्षस्थल को धीरे-धीरे खुजलाती हुई उँगुलियाँ फिराती रहती हैं । जिस दृश्य का वर्णन प्रो. पाण्डेय ने पेरिस की धरती पर किया है वह यहाँ भी यदा-कदा दृष्टिगोचर होता है । अन्तर इतना है की यहाँ पर यह काम सार्वजनिक स्थलों पर होता है और यहाँ लुके-छिपे ।

III. समाज पर प्रभाव

साहित्य समाज का दर्पण है । और यह समय के अनुसार बदलता रहता है । प्रत्येक भाषा और विषय का एक पाठक वर्ग होता है । वह (साहित्य) उसी समाज को लाभ देता है जो उस भाषा या विषय का जानकार होता है । जैसे- महाकवि कालिदास की रचनायें हिन्दी और अंग्रेजी के पाठक को उतना प्रभावित नहीं करेंगी जितना कि संस्कृत के पाठक को । इसीलिए किसी भी साहित्य या साहित्यकार से यह अपेक्षा न की जाय कि- उसकी रचना समाज के हर वर्ग को लाभान्वित करेगी । ओमप्रकाश

वाल्मीकि दलित साहित्य के प्रसिद्ध साहित्यकार थे पर और भाषा तथा दलित साहित्य में रूचि न रखने वाले के लिए वे किसी काम के नहीं। इस विधा को पढ़कर व्यक्ति की इच्छा प्रत्यक्ष रूप से उस स्थान को जाकर देखने की हो जाती है। वह वहाँ के बारे में अधिक-से-अधिक जानकारी इकट्ठा करने की कोशिश करता है। इससे उसके ज्ञान की वृद्धि होती है।

निष्कर्ष

निष्कर्षत: कहा जा सकता है कि- धीरे-धीरे ही सही पर संस्कृत में भी आज नये-नये प्रयोग हो रहे हैं। आज के नये रचनाकारों ने बने –बनाये रास्ते के स्थान अपना स्वयं का साहित्यिक रास्ता बनाया है। आजकल संस्कृत में पत्र साहित्य, लोकगीत, गजल, कौव्वाली, डायरी लेखन, यात्रावृत्तांत, जीवनी, आत्मकथा, पत्रकारिता, अनुवाद आदि पर भी खूब कार्य हो रहे हैं। आधुनिक संस्कृत के संगीतवद्य गीतों और चलचित्रों ने भी बाजार में अपनी जगह बना ली है। आजकल संस्कृत में 'ध्रुवा' नामक बैण्ड भी बहुत चर्चा में है।

सन्दर्भ

[1]. रामकरण शर्मा, वीणा, नाग पब्लिशर्स, दिल्ली, 1990 ई., पृष्ठ संख्या 77

[2]. प्रो. राधा वल्लभ त्रिपाठी, संधानम्, www.sanskrit.nic.in

[3]. प्रो. हरिदत्त शर्मा, लसल्लतिकता, राका प्रकाशन, इलाहाबाद, 2004 ई., पृष्ठ संख्या 85

[4]. प्रो. हरिदत्त शर्मा ,उत्कलिका, योरोपीयम् , आञ्नेय प्रकाशन, इलाहाबाद,प्रथम संस्करण 1989 ई., पृष्ठ संख्या 49

[5]. प्रो. हरिदत्त शर्मा ,उत्कलिका, पेरिसनगरीयम् , आञ्नेय प्रकाशन, इलाहाबाद,प्रथम संस्करण 1989 ई., पृष्ठ संख्या 84

[6]. प्रो. रमाकान्त शुक्ल, सर्वशुक्ला (प्रथम खण्ड), देववाणी परिषद् प्रकाशन, दिल्ली, 2003 ई., पृष्ठ संख्या 132

[7]. डॉ. हर्षदेव माधव, (सम्पादक) नखदर्पण, श्रीवाणी अकादमी प्रकाशन, चाँदखेडा , 2008 ई., पृष्ठ संख्या 27

[8]. प्रो. ओमप्रकाश पाण्डेय, रसप्रियाविभावनम्, 2/11, नाग पब्लिशर्स दिल्ली, 2005 ई., पृष्ठ संख्या 17

[9]. प्रो. ओमप्रकाश पाण्डेय, रसप्रियाविभावनम्, 2/28, नाग पब्लिशर्स दिल्ली, 2005 ई., पृष्ठ संख्या 22

[10]. प्रो. ओमप्रकाश पाण्डेय, रसप्रियाविभावनम्, 2/41-42, नाग पब्लिशर्स दिल्ली, 2005 ई., पृष्ठ संख्या 26